रिचर्ड बार्थोलोमिव : एक दुर्लभ व्यक्तित्व

प्रयाग शुक्ल

रिचर्ड बार्थोलोमिव को ख्याति भले ही एक कला-समीक्षक के रूप में मिली हो, पर वह एक कवि, चित्रकार, छायाकार और पत्रकार भी थे। दरअसल, छायाकार के रूप में तो वह एक बड़ी धरोहर छोड़ गए हैं, जिसे अब उनके बड़े बेटे पाब्लो (जिन्हें स्वयं एक छायाकार के रूप में पर्याप्त ख्याति मिल चुकी है) सम्भाल रहे हैं। पाब्लो के उद्यम से जब पिछले दिनों दिल्ली की 'फोटो इंक' गैलरी में रिचर्ड के खींचे हुए 97 छायाचित्रों की प्रदर्शनी लगी तो मानो कला-जगत में रिचर्ड से जुड़ी हुई स्मृतियों की लहरें एक बार फिर तेज़ी से उठीं और उन सबको नए सिरे से भिगो गयीं, जिन्होंने रिचर्ड को देखा-जाना था, और उनके साथ कुछ, या अधिक समय बिताया था।

कला-समीक्षक और लेखिका वर्षा दास तथा कला इतिहासकार गीति सेन ने प्रदर्शनी पर सुचिन्तित टिप्पणियाँ लिखीं, क्रमश: 'जनसत्ता' और 'द बुक रिव्यू' में और उस दौर की याद दिलायी— साठ-सत्तर के दशक की, जब रिचर्ड दिल्ली और देश के कला-जगत से अभिन्न रूप से जुड़े हुए थे, कई चित्रकारों की कला पर अचूक टिप्पणियाँ की थीं और मानो सहज ही बहुतेरे छायाचित्रों के ज़रिए उस दौर का एक अभिलेखन किया था। पूरे फरवरी महीने भर रिचर्ड की यह प्रदर्शनी पहाड़गंज इलाक़े की 'फोटो इंक' गैलरी में लगी रही और कलाकार, कलाप्रेमी सुधी दर्शक उसे देखने के लिए जाते रहे। मुझे याद है, उन्हीं दिनों श्रीधरणी गैलरी में जेराम पटेल के नयी कलाकृतियों की भी प्रदर्शनी आयोजित थी, जिसे देखने के लिए उद्घाटन वाले दिन (6 फरवरी) ही दिल्ली का कला-जगत उमड़ आया था। और उसी गहमागहमी के बीच मूर्तिशिल्पी मृणालिनी मुखर्जी जेराम भाई को उत्साहपूर्वक बता रही थीं कि वह रिचर्ड की फोटो-प्रदर्शनी देखकर आयी हैं और उसमें जेराम भाई की भी एक पुरानी तस्वीर (1963) है।

इसमें यह सिगरेट पी रहे हैं। और रिचर्ड के दोनों बेटे पाब्लो और ऐंबिन उन्हें कौतूहल पूर्वक देख रहे हैं। धुएँ के छल्लों के बीच उनका चेहरा छिप-सा गया है कि रिचर्ड की खींची हुई तस्वीरें कितनी स्मृतियाँ जगाती हैं। फिर मुझसे पूछा, ''क्या, मैं वह प्रदर्शनी देख आया हूँ?'' मैंने कहा, ''नहीं, अभी नहीं देखी, पर कल ज़रूर ही जाऊँगा।'' प्रदर्शनी देखने को मैं भी सचमुच बहुत ही उत्सुक था। वर्षा दास की समीक्षा से मालूम हुआ था कि उसकी एक तस्वीर में कला समीक्षक केशव मालिक, एस.ए. कृष्णन, चित्रकार जी.आर.सन्तोष और भूषण के साथ मैं भी हूँ। यह 'गैलरी चाणक्य' की है, 1973 की। इस गैलरी को शामी मेंहदीरत्ता चलाते थे और इसमें वह भी (फर्श पर) बैठे हुए हैं। प्रदर्शनी के बारे में लिखते हुए वर्षा जी ने ठीक ही यह नोट किया था कि यह तस्वीर बताती है कि उस वक़्त कला-जगत में कैसा आत्मीय माहौल था और आपस में सबका कैसा मेल-जोल था। कला-चर्चा के लिए इससे अच्छा माहौल भला और क्या हो सकता है, जो तस्वीर दिखा रही है।

जब मृणालिनी प्रदर्शनी की चर्चा जेराम भाई से कर रही थीं तो मुझे इसकी याद स्वाभाविक रूप से आ रही थी कि रिचर्ड ने जेराम पटेल, हुसेन, रामकुमार आदि की कला पर कितना सुन्दर और विचार-प्रवण लेखन किया है। जेराम पटेल और राम कुमार के तो वह समवयसी मित्र ही थे। जेराम भाई ने मुझे एक इंटरव्यू में बताया था कि जब वह दिल्ली में साठ के दशक में कुछ वर्ष करोल बाग़ के इलाक़े में रहे थे तो उन्होंने किसी गैलरी (और साधनों) के अभाव में स्वयं अपने कमरे में ही चित्रों की प्रदर्शनी लगायी थी, जिसे देखने के लिए कुछ मित्र और कलाप्रेमी आए थे। रिचर्ड भी इनमें में शामिल थे। और उन्होंने इस प्रदर्शनी पर लिखा भी था। मैं समझता हूँ ऐसी और भी न जाने कितनी स्मृतियाँ उन सबके भंडार में होंगी जिन्होंने उस दौर को जिया-जाना है।

रिचर्ड अँग्रेज़ी में ही लिखते थे, लेकिन वह उन अँग्रेज़ीदाँ' लोगों में नहीं थे, जो इस भाषा में लिखना शुरू करते ही, अपनी एक अलग दुनिया बना लेते हैं और अन्य भारतीय भाषाओं को बरतने वालों से कट से जाते हैं। वह तो सबसे घुलने-मिलने वालों में थे। सबको सहज ही सुलभ थे। और सच्चे अर्थों में एक 'साधु पुरुष' थे। अचरज नहीं कि पेय पदार्थों में रम को पसन्द करने वाले रिचर्ड को इस पेय के एक ब्रांड 'ओल्ड मंक' के नाम से भी कला-जगत में जाना जाने लगा था। आपसी चर्चाओं में उनके मित्र और आत्मीय

रिचर्ड के कैमरे से राम कुमार

रिचर्ड को कभी-कभार इस नाम से भी याद करते थे— प्रेमपूर्वक!

रिचर्ड से मेरा परिचय यों तो साठ के दशक के अन्तिम वर्षों में ही हो गया था और उनसे कला-प्रदर्शनियों में साहित्यकारों-कलाकारों के मिलने-जुलने वाले 'अड्डों' में, जब तब भेंट भी होती रहती थी, पर सत्तर-अस्सी के दशक में मैं उनके कुछ निकट आ सका। उनके प्रति मेरे मन में शुरू से गहरा रिगार्ड था। 'थॉट' और फिर 'टाइम्स ऑव इंडिया' में उनकी लिखी हुई चीज़ें पढ़कर सोचने-विचारने की सामग्री मिलती थी। उनके संयत-सन्तुलित, शालीन व्यवहार को दूर-पास से देखकर बहुत अच्छा लगता था। जब रिचर्ड ललित कला अकादेमी के सचिव बने तो यह उनका ही आग्रह था कि ललित कला अकादेमी की अँग्रेज़ी पत्रिका 'ललित कला कंटेम्परेरी' की तरह हिन्दी में जो

पत्रिका हो वह भी सुरुचिपूर्ण ढंग से नियमित रूप से निकले। मैं तब 'नवभारत टाइम्स' में था। रिचर्ड ने प्रस्ताव रखा कि मैं ललित कला की हिन्दी पत्रिका 'समकालीन कला' का सम्पादन करूँ और उसके कुछ अंक निकाल दूँ जिससे कि पत्रिका शुरू हो जाए। यह तय हुआ कि मैं अतिथि सम्पादक के रूप में दो अंक निकालूँगा, फिर अकादेमी बाक़ायदा कोई सम्पादक नियुक्त

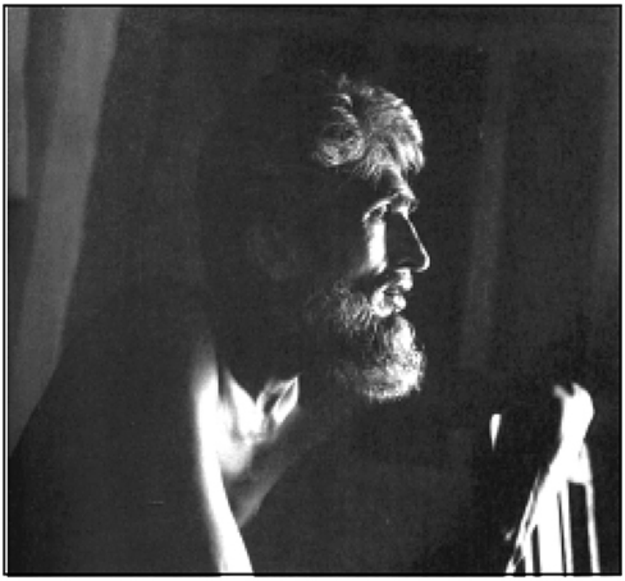

रिचर्ड के कैमरे से मकबूल फ़िदा हुसैन

कर लेगी। 'नवभारत टाइम्स' की मेरी व्यस्तताओं को देखते हुए रिचर्ड ने सुझाव दिया कि तुम लंच टाइम में सप्ताह में दो-एक दिन आ जाया करना, जिसमें हम पत्रिका की डिजाइन आदि पर चर्चा कर लिया करेंगे। उन्होंने सुपरिचित चित्रकार नन्द कत्याल जो तब अमेरिकन सेंटर की पत्रिका 'स्पैन' के आर्ट डायरेक्टर थे— को भी लंच टाइम में कुछ समय निकालने के लिए राजी कर लिया। जब मैंने पत्रिका के लिए सामग्री एकत्र कर ली तो रिचर्ड ने कलाकृतियों के फोटोग्राफ्स आदि ढूँढने में भी मेरी मदद की। लंच टाइम में मैं और नन्द कत्याल अकादेमी आ जाते। रिचर्ड के कमरे में इकट्ठा होते। पत्रिका की डिज़ाइन, आवरण आदि की चर्चा करते। सामग्री एकत्र करने में मुझे पूरी स्वतन्त्रता मिली थी। रिचर्ड ने कभी कोई हस्तक्षेप नहीं किया, न ही किसी को करने दिया। पत्रिका निकली और कृष्णा सोबती के हाथों लोकार्पित हुई। रामकुमार तथा कई अन्य अग्रज और युवा कलाकार लोकार्पण समारोह में शामिल हुए। अनन्तर सम्पादक के रूप में कला प्रेमी-कवि सौमित्र मोहन की नियुक्ति हो गयी। और वह नियमित भी हुई। आज सोचता हूँ तो रिचर्ड के उस उत्साह की बात सोचकर उनके प्रति और सम्मान जागता है, जो हिन्दी पत्रिका के लिए उनमें दिखाई पड़ा था।

1978 में मध्यप्रदेश शासन की ओर से, पेरिस से, सुपरिचित चित्रकार सैयद हैदर रज़ा को भोपाल आमन्त्रित किया गया और उनकी कला पर एक आयोजन भी हुआ, जिसमें रिचर्ड को और मुझे भी बोलने का निमन्त्रण मिला। हम दिल्ली से भोपाल पहुँचे। रिचर्ड और मैं एक ही गेस्ट हाउस में ठहरे थे। हमारे कमरे अगल-बगल ही थे। उन दो-तीन दिनों में उनसे कई चीज़ों पर चर्चा हुई। रिचर्ड कम बोलने वालों में तो नहीं थे, पर यह भी सच है कि वह 'अतिरिक्त' (या कहें कुछ फालतू) बोलने वालों में नहीं थे। आपकी बातें गौर से सुनते थे और आवश्यक होने पर अपनी ओर से, संक्षेप में ही कुछ जोड़ते थे। विट और ह्यूमर की कमी उनमें न थी। किसी मज़ेदार प्रसंग या 'विटी' बात पर खुलकर हँसते थे। सामान्य कद-काठी के, भाव भरी आँखों, और सोचते हुए से चेहरे वाले रिचर्ड की उपस्थिति, दिल्ली के कला-जगत में बरसों-बरस प्रीतिकर बनी रही। वह कला-राजनीति के शिकार भी एकाधिक बार हुए। पर, स्वयं उनकी 'साधुता' में कोई कमी नहीं आयी। ललित कला अकादेमी के सचिव पद पर रहते हुए उन्हें बहुत-सी चीज़ें झेलनी पड़ीं, उनका लिखना-पढ़ना भी कम होता चला गया। पर, कला के प्रति प्रेम में कभी कोई कमी आयी हो, ऐसा कभी दिखाई नहीं पड़ा।

उनके सचिव रहते हुए जो भारत-त्रैवार्षिकी (ट्रिएनाल) हुई थी, उसमें स्वयं रिचर्ड को प्रगति मैदान के एक प्रदर्शनी-कक्ष में कलाकृतियों को स्वयं टाँगने का भी काम करते हुए देखकर मैं कुछ अचरज में पड़ा था, पर उसने रिचर्ड के लिए मेरे मन में आदर और प्रेम के भाव को और बढ़ा दिया था।

रिचर्ड की खींची हुई तस्वीरों की जो प्रदर्शनी 'फोटो इंक' गैलरी में लगी थी, उससे जुड़ी हुई 'अ क्रिटिक्स आई' शीर्षक से एक पुस्तक भी, 'फोटो इंक', 'चटर्जी एंड लाल' तथा 'सीपिया इंटरनेशनल' ने मिलकर प्रकाशित की है। इसमें रिचर्ड की खींची हुई वे सभी 97 तस्वीरें हैं जो प्रदर्शनी में भी थीं। सबके परिचय भी दिए हुए हैं। वे किस वर्ष खींची गयी थीं, यह भी शामिल है। और रिचर्ड के छायाकार रूप पर अवीक सेन का सुचिन्तित, सरस और धारदार लेख भी है। पुस्तक में पाब्लो ने रिचर्ड का एक जीवन-वृत्त भी अत्यन्त प्रेम और भावनापूर्ण ढंग से लिखा है, जिसमें उनके कामकाज, पारिवारिक जीवन और उनके लगावों आदि की भी संवेदनशील चर्चा है।

इसमें दर्ज है कि रिचर्ड का जन्म 19 नवम्बर 1926 को तवॉय, बर्मा (अब म्याँमार) में हुआ था। वह आज होते तो 82 वर्ष के होते। उनका देहान्त 11 जनवरी 1985 को दिल्ली में हुआ था। 1930 में वह रंगून के सेंट पॉल स्कूल में भर्ती हुए थे और 1942 में जब बर्मा पर जापानियों का कब्ज़ा होने ही वाला था तो द्वितीय विश्वयुद्ध के उन दिनों में वह अन्य शरणार्थियों के साथ वहाँ से भाग निकले थे। वे सब उस 'युद्धछाया' से बचते-बचाते मांडले के मैदानी इलाक़ों से परकाई की ऊँची-नीची पर्वत श्रृंखलाओं को पार करते हुए (जो नगा प्रदेश तक फैली हैं) असम की उपरली ब्रह्मपुत्र घाटी के लेडो नामक स्थान पर पहुँचे। इन शरणार्थियों के पास इसके सिवाए और कोई चारा न था कि वे थोड़े-बहुत सामान के साथ ही पर्वतश्रृंखलाओं को पार करें। सो, अपने सिर पर छोटी-मोटी गठरियाँ, और पीछे छूट गए स्वदेश की स्मृतियाँ लिए हुए ही उन्हें जंगलों, नदियों, दलदलों और ऊँचे पर्वतीय मार्गों को पार करना पड़ा।

पाब्लो ने लिखा है, ''भारत मेरे पिता के प्रति कृपालु साबित हुआ। किशोर रिचर्ड को उसने सकूली और कॉलेज की शिक्षा दी और सोचने-विचारने तथा आत्म अभिव्यक्ति के लिए एक उन्मुक्त वातावरण भी दिया। यहाँ रहते हुए रिचर्ड की रचनाशीलता की खुराक मिली, और वह विकसित होती गयी। अगर वे अपने देश वापस चले गए होते तो यह सब सम्भव न हुआ होता। (क्योंकि) वैसे तो भारत की आज़ादी के एक साल बाद बर्मा भी आज़ाद हो गया था, पर जल्दी ही उसने अपने को भीतर से बन्द कर लिया और बाहर की दुनिया से— शेष दुनिया से वह कहता चला गया।''

रिचर्ड की स्कूली शिक्षा दिल्ली के कैंब्रिज हाई स्कूल में हुई, फिर उन्होंने 1948 में सेंट स्टीफेंस कॉलेज से बी.ए. (अँग्रेज़ी) और यहीं से 1950 में एम.ए. (अँग्रेजी) की पढ़ाई पूरी की। यहीं उन्हें रति बत्रा मिलीं और 1953 में दोनों ने विवाह कर लिया। आगे चलकर रिचर्ड ने अगर कला जगत में ख्याति प्राप्त की तो रति बार्थोलोमिव रंग-जगत का एक सुपरिचित नाम बनीं और दिल्ली के

थियेटर की दुनिया में उनके योगदान को कई रूपों में स्वीकारा गया।

दरअसल, उन दिनों की दिल्ली में रिचर्ड और रति जैसे युवा-युगल के सपने, आकांक्षाएँ, विचार और काम, इतने सृजनधर्मी और सच्चे अर्थों में 'क्रियेटिव' थे कि उनका कामकाज और जीवन एक अनूठे प्रेरणास्रोत का काम कर सकता है। और निश्चय ही आज की युवा पीढ़ियाँ उनके जीवन से बहुत कुछ सीख सकती हैं जिसमें कुछ नया और अच्छा करने की तड़प थी, जो सभी कलाओं के प्रति अपने को खुला रखता था, सभी विधाओं के कलाकारों से मैयी की एक आत्मीय चाह रखता था और जो उन सभी को विनम्र भाव से अपना मान-सम्मान और प्रेम देता था, जो कलाओं के प्रति प्रेम रखते थे, और कुछ सिरजना चाहते थे।

'अ क्रिटिक्स आई' इसी जीवन का बहुमूल्य दस्तावेज है। इसमें 1954 से लेकर 1970-71 तक की रिचर्ड की खींची हुई तस्वीरें हैं। इनका वितान दिल्ली, अल्मोड़ा, राजस्थान, मुम्बई से लेकर न्यूयॉर्क तक फैला है, और जिन जगहों और लोगों को लेकर ये तस्वीरें हैं, उनमें भी मानों रिचर्ड का भी कोई न कोई जीवन-मर्म छिपा हुआ है। पुस्तक की शुरुआत होती है, रिचर्ड के 'गर्मियों वाले स्टूडियो' (अल्मोड़ा) से। इसमें दीवार से टिकाकर रखी गयी रिचर्ड की आँकी हुई एक चित्रकृत्ति है— अधूरी। एक मेज़ पर। अगली तस्वीर में, यह चित्रकृति कुछ 'पूरी' है, और रिचर्ड मेज़ पर फैली हुई रंग-सामग्री के बीच हाथ में ब्रश लिए कुर्सी पर बैठे हैं। विचार मग्न। तीसरी तस्वीर में रिचर्ड के सामने टाइपराइटर है, हाथ में सिगरेट है, और इसमें भी वह विचार मग्न, भाव-प्रवण, संवेदित चेहरा है, जिसे दिल्ली ने बरसों-बरस मंडी हाउस, त्रिवेणी कला-संगम, जंगपुरा, कनॉट प्लेस आदि कई इलाक़ों में रास्ता पार करते हुए, किसी से गर्मजोशी से हाथ मिलाते-बतियाते हुए, किसी चित्र-मूर्ति प्रदर्शनी में एकाग्र भाव से कलाकृतियाँ देखते हुए, 'देखा' था। सन्तों जैसे कवि स्वभाव के, और सपनीली आँखों वाले इस सुदर्शन चेहरे के अलावा, पुस्तक में रति और दोनों बेटों की जो तस्वीरें हैं, उनमें रिचर्ड के संसार की कुछ मर्म भरी छवियाँ हैं : 'थॉट' पढ़ती हुई रति, फर्श पर लेटी हुई रति, रति के वक्ष पर खेलता नन्हा पाब्लो, पिकनिक मनाता बार्थोलोमिव परिवार... और फिर तस्वीरें हैं— कुछ पोर्ट्रेट, अपनी ही तरह के : हुसेन, रामकुमार, सूज़ा, बीरेन दे, जी.आर.सन्तोष, जहाँगीर सबावाला आदि कलाकारों के; हैं गलियाँ : दिल्ली, बनारस, न्यूयॉर्क की, और हैं कुछ दृश्य 'खुले' में; एक छोटे से ताल में तैरती भैंसे और एक ओर घर-दरवाज़े खिड़कियाँ, यानी रिहायशी मकान, मसूरी के रिक्शेवाले सोते हुए, एक मकान की छत पर एक धुँधली-सी मानव आकृति और कुछ ही दूर पर नीचे, सड़क के एक हिस्से की चहल-पहल या कुछेक वृक्षों के तने, जिनमें से एक पर लोग अपने-अपने नाम खोद गए हैं। ...रिचर्ड जब भी कैमरे के पीछे से देखते हैं, इन श्वेत-श्याम तस्वीरों में, दोनों ही रंगों को इस तरह 'चुनते' हैं कि एक ओर जहाँ कोई तस्वीर किसी दृश्य को 'उजाले' में ले आती है, वहीं उसके अँधेरे हिस्से कुल कम्पोजीशन के प्रति एक उत्सुकता जगाते हैं। हर तस्वीर जैसे दर्शक के समक्ष एक 'गोपनीय मन्त्रणा' सी करती हैं। विस्मय, उत्सुकता, रोमांच आदि इन तस्वीरों में मानो एक-दूसरे से कन्धा भिड़ाए हुए खड़े होते हैं। जीवन की क्षण-भंगुरता(एँ) और काल से होड़ लेती इच्छाएँ-कामनाएँ भी इन तस्वीरों में पढ़ी जा सकती हैं।

पाब्लो ने इस किताब के प्रकाशन में और रिचर्ड की खींची हुई तस्वीरों के सुन्दर संयोजन में पुत्र-धर्म तो निभाया ही है, यह मानों एक कलाकार द्वारा दूसरे कलाकार को दी गयी ट्रिब्यूट भी है। आगे भी, पाब्लो का इरादा रिचर्ड की कविताओं, और उनके लेखों-टिप्पणियों के संग्रह प्रकाशित करने का है। 1951 से 1958 तक रिचर्ड दिल्ली के मॉडर्न स्कूल में अध्यापक रहे। 1958-1960 में दिल्ली से प्रकाशित होने वाले पत्र 'थॉट' के सहायक सम्पादक बने। 1958-1959 में वह सहायक सम्पादक के ही बतौर 'वाक्' से भी जुड़े। 1957-1958 में वह 'द स्टेट्समैन' के फीचर एडिटर थे। और फिर सिलसिला शुरू हुआ, 'इंडियन एक्सप्रेस', 'थॉट' आदि में कला-समीक्षक की भूमिका का। 1962 के बाद वह कई वर्षों तक 'द टाइम्स ऑव इंडिया' में नियमित रूप से कला-स्तम्भ लिखते रहे। 1960 से 1963 के बीच वह 'क्रणिका आर्ट सेंटर', नयी दिल्ली के डायरेक्टर रहे। 1966-1973 के बीच वह तिब्बत हाउस में तिब्बती कला के प्रथम संग्रहालय के क्यूरेटर रहे। 1970-71 में उन्हें 'टॉकफेलर' फाउंडेशन की सीनियर फेलोशिप (न्यूयॉर्क) मिली। 1977 से 1985 के बीच रिचर्ड ललित कला अकादेमी के सचिव रहे। 1982 में ब्रिटेन में आयोजित 'फेस्टिबल ऑव इंडिया' में 'समकालीन भारतीय कला' शीर्षक से जो प्रदर्शनी गयी, वह उसके कमिश्नर थे। 1984 में जापान फाउंडेशन ने उन्हें जापानी कलाकारों से भेंट करने के लिए जापान आमन्त्रित किया।

और यह भी रिचर्ड के कामकाज का कुल परिचय नहीं है, क्योंकि उनके खाते में कुछ कृतियाँ भी हैं : 1971 में हुसेन पर इसी नाम से न्यूयॉर्क से जो पुस्तक आयी, वह उसके सहलेखक थे। 1972 में द स्टोरी ऑव सिद्धार्थस रिलीज (कविताएँ) राइटर्स वर्कशॉप (कलकत्ता) से प्रकाशित हुई। राइटर्स वर्कशॉप से ही 1973 में 'पोयम्स' नाम से एक और संग्रह आया। 1974 में रिचर्ड ने ललित कला अकादेमी के लिए कलाकार कृष्ण रेड्डी पर मोनोग्राफ लिखा। 1986 में 'द सायकिल' शीर्षक से रिचर्ड का सानेट संग्रह आया— राइटर्स वर्कशॉप से ही।

और अभी न जाने कितनी तस्वीरें, चित्रकृतियाँ, कला-समीक्षाएँ, कविताएँ, टिप्पणियाँ आदि असंकलित पड़ी हैं। रिचर्ड जैसे कला-धनी का सान्निध्य मुझे भी मिला, इसे मैं अपनी एक उपलब्धि ही मानता हूँ : साठ के दशक से लेकर अस्सी के दशक तक की कला गतिविधियाँ रिचर्ड का नाम लेते ही सचमुच बहुविध छवियों के रूप में, सामने से एक बार फिर गुज़रने लगती हैं

रिचर्ड के कैमरे से जेराम पटेल

... जैसे कोई रील चल रही हो...

शुक्रिया रिचर्ड! शुक्रिया पाब्लो!

17-416 पार्श्वनाथ प्रेस्टीज, सेक्टर-93ए, नोएडा-201 304

मो.: 09810973590